सब कुछ भस्मसात् कर देती है, उसी भाँति योगी के हृदय में स्थित भगवान् विष्णु सम्पूर्ण दोषों का नाश करते हैं। 'योगसूत्र' भी श्रीविष्णु के ध्यान का ही विधान करता है, शून्य के ध्यान का नहीं। जो श्रीविष्णु के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु का ध्यान करते हैं, वे योगी कहलाने वाले मूढ़ किसी भ्रममय मृगमरीचिका के अन्वेषण में समय ही नष्ट कर रहे हैं। हमें कृष्णभावनाभावित (कृष्णपरायण) बनना है; यथार्थ योग का यही लक्ष्य है।

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।६२।।

ध्यायतः=चिन्तन करते हुए; **विषयान्**=इन्द्रियविषयों का; **पुंसः**=मनुष्य की; **संगः**=आसक्ति; **तेषु**=उन इन्द्रियविषयों में; **उपजायते**=हो जाती है; **संगात्**=आसक्ति से; **संजायते**=उत्पन्न होती है; **कामः**=कामना; **कामात्**=काम से; **क्रोधः**=क्रोध; **अभिजायते**=प्रकट होता है।

अनुवाद

इन्द्रियविषयों का चिंतन करने से मनुष्य की उनमें आसक्ति हो जाती है; आसक्ति से काम और फिर काम से क्रोध होता है।।६२।।

तात्पर्य

जो मनुष्य कृष्णभावनाभावित नहीं है, उसमें इन्द्रियविषयों के चिंतन से विषयभोग की इच्छा उत्पन्न हो जाती है। इन्द्रियों को कुछ न कुछ कार्य चाहिए। अतः यदि उन्हें भगवद्भक्ति में तत्पर नहीं रखा जायगा तो वे निश्चित रूप से भोगपरायण होना चाहेंगी। अन्य स्वर्गीय देवताओं के सम्बन्ध में तो कहना ही क्या, शिव-ब्रह्मा सहित प्राकृत-जगत् में जीवमात्र का इन्द्रियविषयों के प्रति आकर्षण है। इस प्राकृत प्रपंच से मुक्ति का एकमात्र मार्ग कृष्णभावनाभावित हो जाना है। शिव ध्यानमग्न थे, पर पार्वती द्वारा विषयभोग के लिए उत्तेजित किये जाने पर वे सहमत हो गये, जिससे कार्तिकेय का जन्म हुआ। तरुण भगवद्भक्त ठाकुर हरिदास को मूर्तिमान् माया देवी ने इसी प्रकार प्रलोभित किया था, परन्तु विशुद्ध कृष्णभक्ति के प्रताप से वे अनायास उस परीक्षा में उत्तीर्ण रहे। श्रीयामुनाचार्य द्वारा रचित पूर्वोक्त श्लोक के अनुसार, भगवान् के साथ दिव्यानन्द के आस्वादन का रसिक शुद्ध भक्त विषयभोग का सहज ही सम्पूर्ण रूप से परित्याग कर देता है। यही उसकी कृतार्थता का रहस्य है। अतएव जो कृष्णभावनाभावित नहीं है, वह बाह्य रूप से इन्द्रियों का कितना भी प्रबल दमन क्यों न करे, अन्त में निश्चित रूप से विफल ही रहेगा, क्योंकि विषय सुख का लेशमात्र चिन्तन भी उसे इन्द्रियतृप्ति के लिए उत्तेजित कर देगा।

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति।।६३।।